मकर मौर संक्रान्ति

(दोहा)

शीत शिशिर हेमन्त का, हुआ परम प्राधान्य।
तैल, तूल, तिल, तपन का, सब जग में है मान्य॥

(रुचिरा)

उत्तर अयन इसी तिथि को है, सविता का सुप्रवेश हुआ।
मान दिवस का इस ही कारण, अब से है सविशेष हुआ॥
वेदप्रदर्शित देवयान का, जगती में विस्तार हुआ।
उत्सव संक्रान्ति मकर की का, जनता में सुप्रसार हुआ॥ १॥
तिल के मोदक, खिचड़ी, कंबल, आज दान में देते हैं।
दीनों का दुख दूर भगा कर, उन की आशिष लेते हैं॥
सतिल सुगंधित सुसाकल्य से होम यज्ञ भी करते हैं।
हिम से आवृत नभमण्डल को शुद्ध वायु से भरते हैं॥ २॥

(पं० सिद्धगोपाल काव्यतीर्थ कविरत्न कृत)

जितने काल में पृथिवी सूर्य के चारों ओर परिक्रमा पूरी करती है, उस को एक 'सौर वर्ष' कहते हैं और कुछ लम्बी वर्तुलाकार जिस परिधि पर पृथिवी परिभ्रमण करती है, उसको 'क्रान्तिवृत्त' कहते हैं। ज्योतिषियों द्वारा इस क्रान्तिवृत्त के १२ भाग कल्पित किए हुए हैं और उन १२ भागों के नाम उन उन स्थानों पर आकाशस्थ नक्षत्रपुञ्जों से मिल कर बनी हुई कुछ मिलती जुलती आकृति वाले पदार्थों के नाम पर रख लिए गए हैं।

यथा—१ मेष, २ वृष, ३ मिथुन, ४ कर्क, ५ सिंह, ६ कन्या, ७ तुला, ८ वृश्चिक, ९ धनु, १० मकर, ११ कुम्भ, १२ मीन। प्रत्येक भाग वा आकृति 'राशि' कहलाती है। जब पृथिवी एक राशि से दूसरी राशि में संक्रमण करती है तो उस को 'संक्रान्ति' कहते हैं। लोक में उपचार से पृथिवी के संक्रमण को सूर्य का संक्रमण कहने लगे हैं। छः मास तक सूर्य क्रान्तिवृत्त से उत्तर की ओर उदय होता रहता है और छः मास तक दक्षिण की ओर निकलता रहता है। प्रत्येक षण्मास की अवधि का नाम 'अयन' है। सूर्य के उत्तर ओर उदय की अवधि को 'उत्तरायण' और दक्षिण ओर उदय की अवधि को 'दक्षिणायन' कहते हैं। उत्तरायण काल में सूर्य उत्तर की ओर से उदय होता हुआ दीखता है और उस में दिन बढ़ता जाता है और रात्रि घटती जाती है। दक्षिणायन में सूर्योदय दक्षिण की ओर दृष्टिगोचर होता है और उसमें रात्रि बढ़ती जाती है और दिन घटता जाता है। सूर्य की मकर राशि की संक्रान्ति से उत्तरायण और कर्क-संक्रान्ति से दक्षिणायन प्रारम्भ होता है। सूर्य के प्रकाशाधिक्य के कारण उत्तरायण विशेष महत्त्व-शाली माना जाता है और अतएव उत्तरायण के आरम्भ दिवस मकर की संक्रान्ति को भी अधिक महत्त्व दिया जाता है और स्मरणातीत चिरकाल से उस पर पर्व मनाया जाता है। यद्यपि इस समय उत्तरायण-परिवर्तन ठीक ठीक मकर संक्रान्ति पर नहीं होता और अयनचलन की गति बराबर पिछली ओर को होते रहने के कारण इस समय (संवत् १९९४ वि० में) मकर संक्रान्ति से २२ दिन पूर्व धन राशि के ७ अंश २४ कला पर 'उत्त-रायण' होता है। इस परिवर्तन को लगभग १६५० वर्ष लगे हैं परन्तु पर्व मकरसंक्रान्ति के दिन ही होता चला आता है। इससे सर्वसाधारण की ज्योतिष शास्त्रानभिज्ञता का कुछ परिचय मिलता है, किन्तु शायद पर्व का चलते रहना अनुचित मान कर मकर संक्रान्ति के दिन ही पर्व मनाने की रीति चली आती हो।

मकर-संक्रान्ति के अवसर पर शीत अपने यौवन पर होता है। जना-

घास, जंगल, वन, पर्वत सर्वत्र शीत का आतंक छा रहा है, चराचर जगत् शीतराज का लोहा मान रहा है, हाथ पैर जाड़े से सिकुड़े जाते हैं, "रात्रौ जानुर्दिवा भानुः" रात्रि में जंघा और दिन में सूर्य, किसी कवि की यह उक्ति दीनों पर आजकल ही पूर्ण रूप से चरितार्थ होती है। दिन की अब तक यह अवस्था थी कि सूर्यदेव उदय होते ही अस्ताचल के गमन की तैयारियां आरम्भ कर देते थे, मानों दिन रात्रि में लीन ही हुआ जाता था। रात्रि सुरसा राक्षसी के समान अपना देह बढ़ाती ही चली जाती थी! अन्त को उसका भी अन्त आया। आज मकरसंक्रान्ति के मकर ने उसको निगलना आरम्भ कर दिया। आज सूर्यदेव ने उत्तरायण में प्रवेश किया। इस काल की महिमा संस्कृत साहित्य में वेद से लेकर आधुनिक ग्रन्थ पर्यन्त सविशेष वर्णन की गई है। वैदिक ग्रन्थों में उस को 'देवयान' कहा गया है और ज्ञानी लोग स्वशरीर त्याग तक की अभिलाषा इसी उत्तरायण में रखते हैं। उनके विचारानुसार इस समय देह त्यागने से उनकी आत्मा सूर्यलोक में होकर प्रकाश मार्ग से प्रयाण करेगी। आजीवन ब्रह्मचारी भीष्मपितामह ने इसी उत्तरायण के आगमन तक शरशय्या पर शयन करते हुए प्राणोत्क्रमण की प्रतीक्षा की थी। ऐसा प्रशस्त समय किसी पर्वता (पर्व बनने) से कैसे वञ्चित रह सकता था। आर्य जाति के प्राचीन नेताओं में मकर-संक्रान्ति (सूर्य की उत्तरायण-संक्रमण तिथि) को पर्व निर्धारित कर दिया।

जैसा कि पूर्व बतलाया जा चुका है कि यह पर्व बहुत चिरकाल से चला आता है। यह भारत के सब प्रान्तों में प्रचलित है, अतः इसको एकदेशी न कहकर सर्वदेशी कहना चाहिए। सब प्रान्तों में इसके मनाने की परिपाटी में भी समानता पाई जाती है सर्वत्र शीतातिशय के निवारण के उपचार प्रचलित हैं।

वैद्यक-शास्त्र में शीत के प्रतीकार तिल, तैल, तूल (रुई) बतलाए हैं। जिनमें तिल सब से मुख्य है। इसलिए पुराणों में इस पर्व के सब

कृत्यों में तिलों के प्रयोग का विशेष माहात्म्य गाया गया है और उनको पापनाशक कहा गया है। किसी पुराण का निम्नलिखित वचन प्रसिद्ध है—

तिलस्नायी तिलोद्वर्ती तिलहोमी तिलोदकी ।
तिलभुक् तिलदाता च षट्तिलाः पापनाशनाः ।।

अर्थ—तिलमिश्रित जल से स्नान, तिल का उबटन, तिल का हवन, तिल का जल, तिल का भोजन और तिल का दान ये छः तिल के प्रयोग पापनाशक हैं।

मकर-संक्रान्ति के दिन भारत के सब प्रान्तों में तिल और गुड़ या खांड के लड्डू बनाकर जिनको 'तिलवे' कहते हैं, दान किए जाते हैं और इष्टमित्रों में बांटे जाते हैं। महाराष्ट्र प्रान्त में इस दिन तिलों का 'तीलगूल' नामक हलवा बांटने की प्रथा है और सौभाग्यवती स्त्रियां तथा कन्याएं अपनी सखी सहेलियों से मिलकर उनको हल्दी, रोली, तिल और गुड़ भेंट करती हैं। प्राचीन ग्रीक लोग भी वधू वर की सन्तान वृद्धि के निमित्त तिलों का पक्वान बांटते थे। इससे ज्ञात होता है कि तिलों का प्रयोग प्राचीनकाल में विशेष गुणकारक माना जाता रहा है। प्राचीन रोमन लोगों में भी मकर-संक्रान्ति के दिन अंजीर, खजूर और शहद अपने इष्टमित्रों को भेंट देने की रीति थी। यह भी मकर-संक्रान्ति पर्व की सार्वत्रिकता और प्राचीनता का परिचायक है।

मकर-संक्रान्ति पर्व पर दीनों को शीतनिवारणार्थ कम्बल और घृत दान करने की प्रथा सनातनियों में प्रचलित है। "कम्बलवन्तं न बाधते शीतम्" की श्लिष्ट उक्ति संस्कृत में प्रसिद्ध ही है। घृत को भी वैद्यक में ओज और तेज का बढ़ाने वाला तथा अग्निदीपक कहा गया है। आर्य पर्वों पर दान, जो धर्म का एक स्कन्ध है, अवश्यमेव ही कर्तव्य है और—

देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्विकं स्मृतम् ।

गीता, अध्याय १७ । श्लोक २० ।।

अर्थ—देश, काल और पात्र के अनुसार ही दिया हुआ दान 'सात्विक' कहलाता है। तथा—

दरिद्रान्भर कौन्तेय मा प्रयच्छेश्वरे धनम्।

अर्थ—हे अर्जुन ! दरिद्रों का पालन करो, धनियों को धन मत दो।

इन श्रीमद्भगवद्गीता के वचनों के अनुसार इस प्रबल शीतकाल में मकरसंक्रान्ति पर दीनों को कम्बल आदि का दान परम धर्म है।

पञ्जाब में मकरसंक्रान्ति के पहिले दिन लोढ़ी का तेवहार मनाने की रीति है। इस अवसर पर स्थान २ पर होली के समान अग्नियां प्रज्वलित की जाती हैं और उनमें तपे हुए गन्ने भूमि पर पटका कर आनन्द मनाया जाता है। उससे अगले दिन वहां मकरसंक्रान्ति का भी उत्सव होता है, जिसको वहां 'माघी बोलते हैं। ज्ञात होता है कि यह दोनों दिन के लगातार दो उत्सव न होकर दिनद्वयव्यापी मकरसंक्रान्ति महोत्सव के एक ही पर्व का अपभ्रष्ट रूप है। पञ्जाब के आर्यसामाजिक पुरुषों को चाहिए कि वे दो दिन तेवहार न मनाकर मकरसंक्रान्ति की तिथि को ही परिमार्जित रूप में इस पर्व को मनाएँ और आर्यसामाजिक जगत् में पर्वों की एकाकारता स्थापित करने में सहायक हों।

पद्धति

गृह्यकृत्य—मकरसंक्रान्ति के दिन प्रातः सामान्यपर्वपद्धति में प्रदर्शित विधानानुसार गृह के परिमार्जन, शोधन तथा लेपन आदि के पश्चात् नवीन शुद्ध स्वदेशीय वस्त्र-परिधान पूर्वक सपरिवार सामान्य हवन करें, जिसके साकल्य में तिल और शर्करा का परिमाण प्रचुर होना चाहिए और आहुतियों की मात्रा स्वसामर्थ्यानुसार बढ़ा देनी चाहिएँ। निम्न लिखित हेमन्त और शिशिर ऋतुओं के वर्णन परक ऋचाओं से विशेष आहुतियां दी जांय।

ओ३म् सहश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृतू ॥
अग्नेरन्तः श्लेषोऽसि स्वाहा ॥
कल्पेताम्, द्यावापृथिवी स्वाहा ॥
कल्पन्ताम्, आप ओषधयः स्वाहा ॥
कल्पन्ताम्, अग्नयः पृथङ्मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः, स्वाहा ॥

ये अग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवी इमे । हैमन्तिकावृतू अभिकल्पमाना इन्द्रमिव देवा अभिसंविशन्तु तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम्, स्वाहा ॥ यजु० अ० १४ मं० २७ ॥

ओ३म् तपश्च तपस्यश्च शैशिरावृतू, अग्नेरन्तः श्लेषोऽसि स्वाहा ॥
कल्पेताम्, द्यावापृथिवी स्वाहा ॥
कल्पन्ताम्, आप ओषधयः स्वाहा ॥
कल्पन्ताम्, अग्नयः पृथङ्मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः, स्वाहा ॥

ये अग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवी इमे हैमन्तिकावृतू इन्द्रमिव देवा अभिसंविशन्तु तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम् स्वाहा ॥ यजुर्वेद अ० १५ मं० ५१ ॥

तत्पश्चात् तिल के लड्डू (तिलवे) होम यज्ञ में समागत पुरुषों को हुतशेष के रूप में समर्पण किए जांय और स्ववित्तानुसार कम्बल सहित दीन-दुखियों को दान दिए जांय ।

सामाजिक कृत्य—अपराह्ण में सब आर्यसामाजिक पुरुष किसी प्रशस्त क्षेत्र में एकत्रित होकर दण्ड, बैठक और रस्सा खेंचना आदि के व्यायामों का प्रदर्शन करके उत्सव के आनन्द की वृद्धि करें ।